CBSE कक्षा 11 व्यवसाय अध्ययन
पाठ-2 व्यवसायिक संगठन के प्रारूप
पुनरावृति नोट्स

अर्थ:
एक व्यावसायिक उपक्रम एक संगठन है जो किसी व्यवसाय या वाणिज्यिक क्रिया में संलग्न होता है। स्वामित्व के आधार पर व्यावसायिक संगठनों को तीन वर्णों में विभाजित किया जा सकता है :-

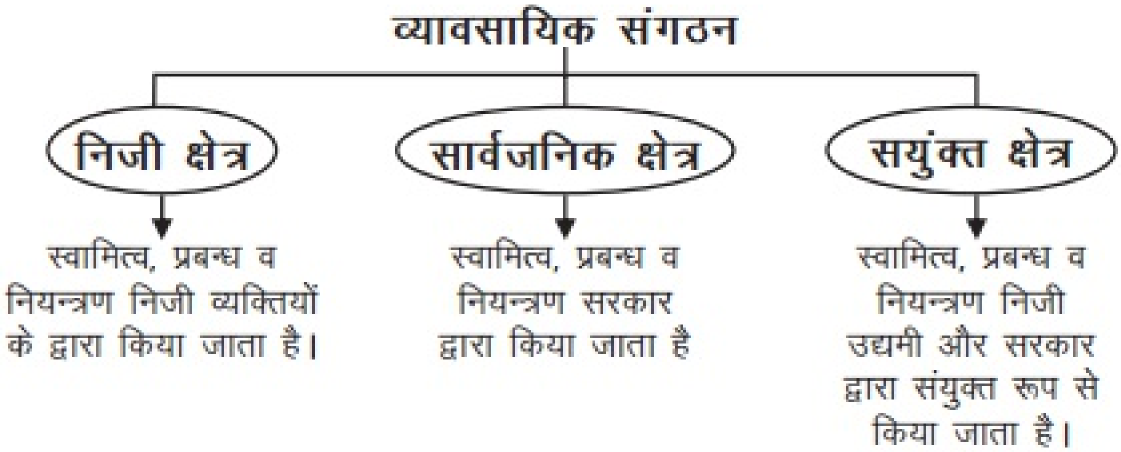

निजी क्षेत्र को प्रारूप

1. एकल स्वामित्व
2. संयुक्त हिन्दू परिवार
3. साझेदारी
4. सहकारी समिति
5. कम्पनी

सार्वजनिक क्षेत्र को प्रारूप

1. विभागीय उपक्रम
2. सार्वजनिक निगम
3. सरकारी कम्पनी अर्थ एकल स्वामित्व अकेला स्वामी

एकल स्वामित्व (Sole-Proprietorship)
अर्थ- एकल - अकेला
स्वामित्व- स्वामी.
अर्थात् 'एकल स्वामित्व का अभिप्राय व्यावसायिक संगठनों के उस प्रारूप से है जिसका स्वामी एक अकेला व्यक्ति होता है। वह ही इसका प्रबंध करता है तथा सम्पूर्ण लाभ-हानि प्राप्त करता है।

एकल स्वामित्व के लक्षण या विशेषताएँ :-

1. **एकाकी स्वामित्व -** व्यवसाय की सारी सम्पत्ति व साधनों का अकेला स्वामी होता है।
2. **पृथक वैधानिक अस्तित्व नहीं -** इस प्रारुप में व्यवसाय तथा व्यवसायी में कोई अंतर नहीं माना जाता। अर्थात् जो भी सम्पति व दायित्व व्यवसाय के हैं, वे सभी व्यवसयायी के ही होते हैं।
3. **निर्माण -** इस प्रारूप के निर्माण के लिए किन्हीं वैधानिक औपचारिकताओं को पूरा करने की आवश्यकता नहीं होती।
4. **प्रबन्ध व नियन्त्रण -** व्यवसाय का प्रबन्ध व संचालन कवल एक ही व्यापारी द्वारा किया जाता है।
5. **असीमित दायित्व -** एकल स्वामी का दायित्व असीमित होता है। यदि व्यावसायिक संपत्तियाँ ऋणों के भुगतान के लिए पर्याप्त नहीं हैं तो उसकी निजी संपत्ति का प्रयोग भी देनदारों को भुगतान करने के लिए किया जा सकता है।
6. **अविभाजित जोखिम -** अर्थात् लाभ भी उसका तथा जोखिम (हानि) भी उसका।
7. **व्यवसायों के लिए उपयुक्त -** ग्राहकों को निजी सेवाएँ प्रदान करने के लिए व छोटे पैमाने के व्यवसाय जैसे कृषि, सिलाई का कार्य, बेकरी, ब्यूटी पार्लर आदि के लिए इस प्रकार का प्रारूप अत्यधिक उपयुक्त है।
8. **गोपनीयता -** सभी महत्वपूर्ण बातों की जानकारी केवल स्वामी को ही होती है इसलिए कोई भी बाहरी पक्षकार इनसे अनुचित लाभ नहीं उठा सकता |

एकल व्यापार क गुण -

1. **स्थापना में सुगमता -** इसकी स्थापना करना तथा बंद करना बहुत आसान है क्योंकि इसके लिए किसी प्रकार की वैद्यानिक औपचारिकताओं को पूरा नहीं करना पड़ता।
2. **शीघ्र-निर्णय -** एकल व्यापारी निर्णय शीघ्रता से ले सकता है क्योंकि उसे निर्णय लेने के लिए किसी से सलाह या अनुमति लेने की आवश्यकता नहीं होती।
3. **गोपनीयता का लाभ -** व्यवसाय के महत्वपूर्ण रहस्य सुरक्षित रहते हैं क्योंकि उनका ज्ञान केवल एक ही व्यक्ति स्वामी को होता है।
4. **प्रत्यक्ष प्रेरणा -** परिश्रम व प्रतिफल में सीधा सम्बन्ध होने के कारण स्वामी को कठिन परिश्रम करने की प्रेरणा मिलती है।
5. **व्यक्तिगत नियंत्रण -** एकल व्यापारी अपने ग्राहकों व कर्मचारियों से व्यक्तिगत संपर्क बनाए रखता है जिससे कम समय व लागत पर अधिक व अचछा कार्य संभव होता है।

एकल व्यापार की सीमाएं-

1. **सीमीत वित्तीय साधन -** एकाकी व्यापार में वित्तीय साधन व्यवसायी की अपनी स्वयं की पूंजी तथा उसकी रुपया उधार लेने की क्षमता तक सीमति होते हैं।
2. **सीमित प्रबंधकीय कुशलता -** इसमें सभी कार्य एकाकी व्यापारी द्वारा किए जाते हैं जो सभी क्षेत्रों में कुशल नहीं हो सकता । वह कुशल कर्मचारी की नियुक्ति करने में भी सक्षम नहीं होता।
3. **असीमित दायित्व -** एकाकी स्वामी निजी रूप से सभी ऋणों के लिए उत्तरदायी होता है, इस कारण वह जोखिम लेने से कतराता है।

4. **अस्थायी अस्तित्व -** व्यवसाय का जीवन, पूर्ण रूप में स्वामी से जुड़ा हुआ होता है। स्वामी की मृत्यु पागलपन, दिवालिया होने की दशा में व्यवसाय बंद करना पड़ता है।
5. **विस्तार के लिए सीमित अवसर -** सीमित पूंजी तथा प्रबन्धकीय कुशलता के कारण व्यवसाय का विस्तार बहुत अधिक नहीं किया जा सकता |

एकल स्वामित्त्व की उपयुक्तता
संगठन का यह स्वरूप निम्नलिखित दशाओं में उपयुक्त हैं

- उन व्यवसायों में जहाँ कम पूंजी व सीमित प्रबन्धकीय योग्यता की आवश्यकता पड़ती हो। जैसे फुटकर व्यापार ।
- उन व्यवसायों में जहाँ ग्राहकों को व्यक्तिगत सेवाएं प्रदान की जाती हैं कपड़े सिलने में, बाल काटने में, दवा तथा कानून संबंधी सलाह देने
- अप्रमाणित वस्तुओं जैसे ऑर्डर पर जेवर बनाने के उत्पादन में।

संयुक्त हिंदू परिवार व्यवसाय
संयुक्त हिन्दू परिवार व्यवसाय का स्वामित्व एवं संचालन एक संयुक्त हिन्दू परिवार के सदस्य करते हैं। व्यवसाय का प्रबंध तथा नियंत्रण परिवार के वरिष्ठ पुरूष सदस्य (मुखिया), जिसे 'कर्ता कहा जाता है, के द्वारा किया जाता है। इसका प्रशासन हिंदू कानून के द्वारा किया जाता है। इसमें सदस्यता का आधार-परिवार में जन्म होता है। इसका का निर्माण दो बातों पर निर्भर करता है-

1. परिवार में कम से कम दो सदस्यों का होना।
2. पूर्वजों की सम्पत्ति का होना।
   इसमें सदस्यता को नियंत्रित करने की दो प्रणालियाँ है।

	दयाभाग प्रणाली		मिताक्षरा प्रणाली
1	यह प्रणाली पश्चिम बंगाल में प्रचलित है |	1	यह प्रणाली पश्चिम बंगाल को छोड़कर सारे भारत में प्रचलित है।
2	इसके अंतर्गत परिवार के पुरूष व महिला दोनों ही सहभागी होते हैं	2	इसमें केवल परिवार के पुरूष सदस्य ही सहभागी होते हैं।

संयुक्त हिन्दू परिवार व्यवसाय को लक्षण-

1. **निर्माण -** इसमें परिवार में कम से कम दो सदस्य एवं पैतृक संपति जो उन्हें विरासत में मिली हो, का होना आवश्यक है।
2. **सदस्यता-** इसकी सदस्यता परिवार में जन्म लेते ही आरम्भ हो जाती है।
3. **नियन्त्रण-** व्यवसाय के संचालन का पूरा अधिकार केवल कर्ता के पास होता है। परिवार के अन्य सदस्य केवल उसे सलाह दे सकते हैं।
4. **दायित्व-** कर्त्ता के अलावा अन्य सभी सदस्यों का दायित्व संयुक्त संपत्ति में उनके व्यक्तिगत हित के मूल्य तक सीमित होता है।
5. **स्थायी अस्तित्व-** व्यवसाय का अस्तित्व स्थाई होता है। सदस्यों की मृत्यु दिवालियापन या पागलपन का कोई प्रभाव व्यवसाय

पर नहीं होता।

6. **नाबालिंग सदस्य -** इसमें सदस्यता परिवार में जन्म लेने के कारण होती है, इसलिए नाबालिंग भी व्यवसाय के सदस्य होते हैं।
7. **पंजीकरण -** इसके लिए किसी भी प्रकार के पंजीकरण की आवश्यकता नहीं होती।

संयुक्त हिन्दू परिवार व्यवसाय क गुण :-

1. सीमित पूंजी-कर्ता के पास व्यवसाय के प्रबन्ध तथा नियंत्रण का पूर्ण अधिकार होने के कारण वह निर्णय शीघ्रता से लेता है। इसमें किसी भी अन्य सदस्य को हस्ताक्षेप करने का अधिकार नहीं होता है।
2. कर्त्ता का असीमित दायित्व- इसमें कर्त्ता का दायित्व असीमित होता है जिसके कारण वह नये तथा जोखिम भरे निर्णय लेने से हिचकिचाता है।
3. कर्त्ता का प्रभुत्व-कर्त्ता अकेले ही व्यवसाय का प्रबंध करता है जो कभी-कभी अन्य सदस्यों को मान्य नहीं होता है। इससे उनमें टकराव हो सकता है व पारिवारिक इकाई भी भंग हो सकती है।
4. सीमित प्रबंधकीय क्षमता - व्यवसाय के प्रबन्ध की पूरी जिम्मेदारी कर्ता पर होती है, परन्तु वह व्यवसाय के हर क्षेत्र में कुशल नहीं हो सकता तथा उसके द्वारा लिया गया कोई निर्णय व्यवसाय को बर्बाद कर सकता है।
5. असंतुलित निर्णय - कर्त्ता को निर्णय लेते समय किसी से सलाह लेने की आवश्यकता नहीं होती है। इस कारण उसके द्वारा लिया गया निर्णय कई बार असंतुलित होता है।

संयुक्त हिन्दू परिवार के व्यवसाय की सीमाएँ :-

1. **सीमित साधन-** संयुक्त हिन्दू परिवार के साधन सीमित होते हैं जिसके कारण बड़े पैमाने के व्यवसाय की स्थापना नहीं की जा सकती है।
2. **सीमित प्रबंधकीय क्षमता-** इसमें सभी निर्णय कर्त्ता को लेने होते है परंतु वह व्यवसाय के हर क्षेत्र में कुशल नहीं हो सकता तथा उसके द्वारा लिया गया कोई निर्णय व्यवसाय को बर्बाद कर सकता है।
3. **असीमित उत्तरदायित्व-** इसमें कर्त्ता का दायित्व असीमित होता है जिसके कारण वह नये तथा जोखि भरे निर्णय लेने से हिचकिचाता है।
4. **असंतुलित निर्णय-** कर्त्ता को निर्णय लेते समय किसी से सलाह लेने की आवश्यकता नहीं होती है। इस कारण उसके द्वारा लिया गया निर्णय कई बार असंतुलित होता है।
   नोट - देश में संयुक्त हिन्दू परिवारों की संख्या कम होती जा रही है, इसी कारण व्यवसाय के इस प्रारूप का चलन भी कम होता जा रहा है।

परिभाषा- भारतीय साझेदारी अधिनियम 1932 के अनुसार ‘साझेदारी उन व्यक्तियों के मध्य एक संबंध है जिन्होंने ऐसे व्यवसाय के लाभ को परस्पर बांटने का समझौता किया है जिसे वे सब चला रहे हैं या उन सबकी ओर से कोई एक चला रहा है।
लक्षण-

1. **एक से अधिक व्यक्तियों का होना -** साझेदारी के निर्माण के लिए न्यूनतम दो सदस्यों तथा अधिकतम 20 सदस्यों का होना अनिवार्य है।

2. **समझौता -** साझेदारी, साझेदारों के बीच लिखित या मौखिक समझौते का परिणाम होता है।
3. **उद्देश्य लाभ कमाना तथा आपस में बांटना -** साझेदारी का मुख्य लक्षण व्यवसाय में लाभ कमाना तथा उसे साझेदारों में परस्पर बांटना है।
4. **प्रबंध व नियंत्रण -** प्रत्येक साझेदार को प्रबंध में हिस्सा लेने का पूरा अधिकार होता है।
5. **असीमित दायित्व -** प्रत्येक साझेदार का दायित्व असीमित होता है।
6. **स्थायित्व का अभाव -** किसी भी साझेदार की मृत्यु, अवकाश ग्रहण करने, दिवालिया होने या फिर पागल होने पर, साझेदारी समाप्त हो। सकती है।
7. **स्वामी एवं एजेंट का संबंध -** प्रत्येक साझेदार स्वामी तथा एजेंट दोनों के रूप में होता है।

साझेदारी क गुण :-

1. **निर्माण की सुविधा -** इसका निर्माण आसानी से बिना किसी कानूनी औपचारिकताओं को पूरा किए बिना किया जा सकता है।
2. **विशाल वित्तीय साधन -** सभी साझेदारों की पूंजी लगने से वित्तीय साधन अधिक हो जाते हैं तथा लाभ भी बढ़ जाता है।
3. **बेहतर निर्णय -** सभी महत्वपूर्ण निर्णय सभी साझेदारों की सहमति से लिए जाते हैं, परिणामस्वरूव बेहतर तथा संतुलित निर्णय होते हैं।
4. **जोखित का बँटावारा -** सारा जोखिम सभी साझेदारों में बंट जाता है। जिससे वह चिन्ता मुक्त होकर कार्य करता है।
5. **गोपनीयता -** साझेदारी फर्म को अपने खाते प्रकाशित करने की आश्यक नहीं होती। इसलए साझेदरी के माहवर्णभेद गुप्त रचे जा

सीमाएँ :-

1. **सीमित साधन -** एक साझेदारी फर्म में साझेदारों की संख्या सीमित होने के कारण उनके द्वारा लगाई गई पूंजी भी सीमित होती है।
2. **असीमित दायित्व -** साझेदारों का दायित्व असीमित होता है।
3. **निरतंरता का अभाव -** किसी भी साझेदार की मृत्यु पागलपन या दिवालिया हो जाने पर व्यवसाय समाप्त हो जाता है।
4. **जन-विश्वास की कमी -** जनता का विश्वास साझेदारी फर्म में कम होता है क्योंकि फर्म के द्वारा वार्षिक रिपोर्ट तथा खाते प्रकाशित नहीं किए जाते |
5. **समन्वय का अभाव -** अधिक व्यक्ति होने से उनके विचारों में भिन्नता हो सकती है। जिसके कारण उनमें झगड़े होने लगते हैं और समन्वय का अभाव हो जाता है।

नोट - जब व्यवसाय का आकार मध्य स्तर का हो तथा साझेदारों में आपसी समझ-बूझ व सद्भावना हो तो यह प्रारूप अर्थात् साझेदारी सर्वोत्तम है। उदाहरण - C.A. फर्म, Law फर्म, होटलों तथा मध्य-स्तर के कारखानों में, etc.
साझेदारी के प्रकार - साझेदारी काल और दायित्व के आधार पर बांटी जाती हैं |
A. काल के आधार पर -

	ऐच्छिक सामग्री		**विशेष साझेदारी**

	यह साझेदारों की इच्छा पर निर्भर करती है तथा अनिश्चित काल तक चलती है।		यह साझेदारी किसी विशेष उद्देश्य के लिए प्रारम्भ की जाती है तथा उद्देश्य पूरा होने पर समाप्त की जाती है।
	A. काल के आधार पर - सामान्य साझेदारी		**सीमित साझेदारी**
1	इसमें साझेदारों का दायित्व असीमित तथा इकठ्ठा होता है |	1	इसमें कम से कम एक साझेदार असीमित दायित्व वाला होना जरुरी है तथा बाकी साझेदारों का दायित्व सिमित होता है |
2	इसमें प्रत्येक साझेदार को फर्म के प्रबंध में भाग लेने का अधिकार है |	2	सीमित साझेदारों को प्रबंध में भाग लेने का अधिकार अनिवार्य है |
3	पंजीकरण अनिवार्य नहीं है	3	पंजीकरण अनिवार्य है |
4	किसी भी साझेदार की मृत्यु, पागलपन, दिवालियापन से फर्म पर प्रभाव पड़ता है |	4	केवल सिमित साझेदार की मृत्यु पागलपन या दिवालियापन होने से फर्म पर प्रभाव नहीं पड़ता है |

Types of Partners साझेदारों के प्रकार

प्रकार	फर्म में पूंजी	प्रबंध में भाग	लाभ–हानि का बंटवारा	दायित्त्व
सक्रिय साझेदार	फर्म में पूंजी लगाता है	प्रबंध में भाग लेता है।	लाभ–हानि बाँटता है।	असीमित दायित्त्व
सुप्त/निष्क्रिय साझेदार	पूंजी लगाता है।	प्रबंध में भाग नहीं लेता।	लाभ–हानि बाँटता है।	असीमित दायित्त्व
गुप्त साझेदार	पूंजी लगाता है परंतु आम–जनता में नहीं जाना जाता	प्रबंध में भाग लेता है।	लाभ–हानि बाँटता है।	असीमित दायित्त्व
नाममात्र का साझेदार	पूंजी नहीं लगाता परंतु उसका नाम प्रयोग होता है।	प्रबंध में भाग नहीं लेता है।	आमतौर पर लाभ–हानि नहीं बाँटता है।	असीमित दायित्त्व
गत्यावरोध द्वारा साझेदार	पूंजी नहीं लगाता परंतु अपने आचरण और व्यवहार से अपनी उपस्थिति का आभास देता है	प्रबंध में भाग नहीं लेता है।	लाभ–हानि नहीं बाँटता है।	असीमित दायित्त्व
प्रदर्शन द्वारा साझेदार	पूंजी नहीं लगाता। दूसरों द्वारा साझेदार कहे जाने पर कोई आपत्ति नहीं करता।	प्रबंध में भाग नहीं लेता है।	लाभ–हानि नहीं बाँटता है।	असीमित दायित्त्व
अवयस्क साझेदार (18 वर्ष से कम आयु)	पूंजी नहीं लगाता	प्रबंध में भाग नहीं लेता है।	लाभ–हानि बाँटता है।	सीमित दायित्त्व (विनियोग की गई पूंजी तक)

साझेदारी संलेख - साझेदारों के बीच हुआ अनुबंध या समझौता जो मुद्रित कागज पर लिखा होता है तथा जिसमें साझेदारी के नियम तथा शर्तों का वर्णन होता है, साझेदारी संलेख कहलाता है। सामान्यत: इसमें निम्न जानकारियाँ दी जाती है:-

1. फर्म का नाम व पता
2. साझेदारों के नाम व पते
3. साझेदारी की अवधि
4. व्यापार का क्षेत्र
5. साझेदारी द्वारा दी जाने वाली पूंजी
6. लाभ-हानि का अनुपात
7. साझेदारों के वेतन, आहरण, पूंजी पर ब्याज तथा आहरण पर ब्याज सम्बन्धित नियम
8. साझेदारों के अधिकार तथा दायित्व
9. साझेदारों के आगमन, निवृत्ति व फर्म में समापन से सम्बन्धित प्रावधन/नियम
10. विवादों को हल करने की विधियाँ
11. ख्याति का मूल्यांकन आदि ।

साझेदारी फर्म का पंजीकरण - कानूनी रूप से साझेदारी फर्म का पंजीकरण कराना अनिवार्य नहीं है। परंतु पंजीकरण फर्म तथा साझेदारों के हित में होता है एक अपंजीकृत फर्म को निम्नलिखित समस्याओं का सामना करना पड़ता है।

1. अपंजीकृत फर्म का साझेदार अन्य साझेदार के विरूद्ध कोई मुकदमा दायर नहीं कर सकता |
2. अपंजीकृत फर्म किसी बाहरी पक्ष के विरूद्ध मुकदमा दायर नहीं कर सकती |
3. अपंजीकृत फर्म किसी साझेदार के विरूद्ध भी मुकदमा दायर नहीं कर सकती |

सहकारिता का अर्थ है किसी समान उद्देश्य के लिए मिलकर कार्य करना। सहकारिता संगठन या समिति से अभिप्राय ऐसे ऐच्छिक संगछन से है जिसकी स्थापना कुछ व्यक्तियों द्वारा सहकारिता एवं समानता के आधार पर पारस्परिक आर्थिक हितों की सुरक्षा के लिए की जाती है।
उद्देश्य - अपने सदस्यों को पूंजीपति वर्ग व मध्यस्थों के द्वारा किए जाने वाले शोषण से बचाना न कि लाभ कमाना|

विशेषताएँ या लक्षण :-

1. **स्वैच्छिक सदस्यता -** समान हित रखने वाला कोई भी व्यक्ति समिति का सदस्य बन सकता है।

2. **वैधानिक स्थिति -** सहकारी समिति का पंजीकरण अनिवार्य है। इसके बाद समिति का अस्तित्व अपने सदस्यों से अलग हो जाता हैं
3. **सीमित दायित्व -** सदस्यों का दायित्व उनके द्वारा लगाई गई पूँजी तक सीमित होता है।
4. **नियंत्रण -** इनका नियंत्रण स्वयं सदस्यों द्वारा प्रजातंत्रात्मक आधार पर किया जाता है।
5. **मुख्य उद्देश्य -** इसका मुख्य उद्देश्य अपने सदस्यों की अधिकतम संभव सहायता प्रदान करना है।
6. **नकद व्यापार -** सहकारी समितियाँ नकद व्यापार को प्राथमिकता देती है।
7. **सरकारी नियन्त्रण -** सरकारी समितियों को अपनी वार्षिक रिपोर्ट एवं लेखे रजिस्ट्राट के पास में जने होते हैं ताकि सरकार समय-समय पर इन लेखों का निरिक्षण करके इन पर नियन्त्रण रख सकें।
8. **वित्त की व्यवस्था -** सरकारी समितियाँ सदस्यों को बेचे गए अंशों से, सरकार से प्राप्त ऋण से वित्त को एकत्रित करती हैं।

सहकारी समिति को लाभ :-

1. **निर्माण में सुविधा -** समान हित वाले कोई भी दस व्यस्क व्यक्ति मिलकर इसका निर्माण कर सकते हैं। पंजीकरण की प्रक्रिया भी साधारण होती है।
2. **वैधानिक स्थिति (स्थायित्व)** पृथक वैधानिक अस्तित्व होने के कारण सदस्यों की मृत्यु, दिवालियापन एवं अक्षमता का समिति पर कोई प्रभाव नहीं पड़ता।
3. **सीमित दायित्व -** इसके सदस्यों का दायित्व उनके द्वारा लगाई गई पूंजी तक सीमित होता है।
4. **सस्ती दर पर वस्तुएँ उपलब्ध कराना -** ये समितियाँ, वस्तुएँ सीधे थोक व्यापारियों से खरीदकर, अपने सदस्यों को बाजार से कम दर पर वस्तुएँ विक्रय करके उनके लाभ पहुँचाती हैं।
5. **सरकारी सहायता -** सरकार सहकारी समितियों को बहुत से वित्तीय अनुदान जस कम टकस, नीची ब्याज दर पर ऋण देकर सहायता प्रदान करती है।

सीमाएँ:-

1. **पूँजी की कमी -** सरकारी संगठन प्रायः सीमित साधनों वाले व्यक्तियों द्वारा बनाऐ जाते हैं इसलिए इनें सीमित पूंजी की समस्या का सामना करना पड़ता है।
2. **अकुशल प्रबन्ध -** इनका प्रबंध स्वयं ही उनके सदस्यों द्वारा किया जाता है जो कि पेशेवर कुशल और अनुभवी नहीं होते तथा समिति का संचालन प्रभावपूर्ण ढंग से नहीं कर सकते ।
3. **गोपनीयता का अभाव -** इनको अपनी वार्षिक रिपोर्ट और खाते रजिस्ट्राट के पास भेजने होते हैं जिससे व्यवसाय की गोपनीय बातें भी सबके सामने आ जाती है।
4. **अत्यधिक सरकारी नियंत्रण -** सरकारी समितियाँ, राज्य सरकार के सहकारी विभाग के कानूनों और नियमों के अधीन होती हैं।
5. **सदस्यों के बीच मतभेद -** इनमें बहुत सी दशाओं में प्रबन्धकीय समिति तथा सदसयों के बीच मतभेद-विवाद उत्पन्न हो जाते हैं तथरा प्रबन्धकीय समिति सेवा के उद्देश्य को भूलकर, अपने स्वार्थ के लिए शासन करना आरम्भ कर देती है।

सहकारी संगठन को प्रकार

1. **उपभोक्ता सहकारी समिति-** इनका मुख्य उद्वेश्य मध्यस्थों के द्वारा किए जाने वाले ग्राहकों को शोषण को खत्म करना है। यह आम जरूरत की सभी वस्तुएँ सीधे उत्पादकों तथा थोक व्यापारियों से खरीदकर सदस्यों को उचित कीमतों पर उपलब्ध कराती हैं।
2. **उत्पादक सहकारी समिति -** इनका मुख्य उद्वेश्य छोटे उत्पादको को मदद प्रदान करना है जिन्हें व्यक्तिगत रूप में उत्पादन के लिए जरूरी कच्चा माल, मशीनरी और आधुनिक तकनीक को जुटाने में कठिनाई होती है। ये समितियाँ दो प्रकार की होती है :
   i. (अ) एक दो जो अपने सदसयों को आवश्यक कच्चा माल, आगते, मशीनरी इत्यादि उचित मूल्य पर उपलब्ध कराती है।
   ii. दूसरी जो इन उत्पादकों द्वारा उत्पादित वस्तुओं को बेचती हैं।
3. **सहकारी विपणन समितियाँ -** यह छोटे उत्पादकों तथा कृषकों को जिन्हें अपने माल को लाभकारी मूल्यों में बेचने में कठिनाई होती है, की मदद करती है। यह अपने सदस्यों के लिए विभिन्न प्रकार की विपणन सम्बन्धी सुविधाएँ जैसे परिवहन, भण्डारण, पैकेजिंग, ग्रेडिंग व बाजार सर्वेक्षण का इंतजाम करती है। तथा यह अपने सदस्यों को उनके द्वारा तैयार किए गए माल के लिए उचित मूल्य दिलाने में मदद करती है।
4. **सहकारी कृषि समिति -** इनके सदस्य ये छोटे किसान होते है जो मिलकर सुविधाओं का प्रबन्ध करती है।
5. **सहकारी साख समिति -** इनका मुख्य उद्वेश्य अपने सदस्यों को साहूकारों के चुंगल से बचाना होता है। यह अपने जरूरतमंद सदस्यों को आसान शर्ते तथा कम ब्याज पर ऋण उपलब्ध कराती हे |
6. **सहकारी आवास समिति -** इनका मुख्य उद्वेश्य अपने सदस्यों को आसान शतों व उचित मूल्यों पर फ्लैट अथवा प्लॉट उपलब्ध करना है।

संयुक्त पूँजी कम्पनी :-

संयुक्त पूंजी कम्पनी

अर्थ- संयुक्त पूंजी कम्पनी व्यक्तियों के द्वारा बनाया गया ऐच्छिक संघ है। जिसका अपना एक अलग वैधानिक अस्तित्व, शाश्वत जीवन तथा सार्वमुद्रा होती है तथा इसकी पूंजी हस्तांतरणीय शेयरों में बंटी हुई होती है।

लक्षण-

1. **गठन -** भारतीय कपनी अधिनियम 1956 के अनुसार कपनी का पंजीकरण अनिवार्य है। कपंनी के गठन के लिए कई दस्तावेजों को तैयार करने और उन्हें रजिस्ट्रार के पास जमा करवाने तथा अन्य कई वैधानिक औपचारिकताएँ पूरी करनी पड़ती हैं।
2. **पृथक वैधानिक अस्तित्व -** इसकी रचना कानून के द्वारा होती है तथा समामेलन के कारण इसकी अपनी पृथक पहचान होती है। कानून की निगाह में कम्पनी तथा उसके सदस्य एक नहीं होते हैं।
3. **शाश्वत अस्तित्व -** संयुक्त पूंजी कम्पनी की रचना तथा इसका अंत केवल काननू के द्वारा ही किया जा सकता है। कम्पनी के अस्तित्व पर इसके शेयरधारियों के आने जाने, मृत्यु, पागलपन, दिवालियापन का कोई प्रभाव नहीं पड़ता।
4. **सीमित दायित्व -** कम्पनी के प्रत्येक सदस्य का दायित्व उसके द्वारा क्रय किए गए अंशों के अंकित मूल्य तक अथवा उसके द्वारा दी गई गारंटी की राशि तक सीमित होता है।
5. **अंशों की हस्तांतरणीयता -** कम्पनी की पूंजी हस्तांतरणीय शेयरों में बंटी हुई होती है | केवल निजी कंपनी के शेयरों के हस्तांतरण पर कुछ प्रतिबंध होते हैं |
6. **सार्वमुद्र -** एक कृत्रिम व्यक्ति होने के कारण कम्पनी हस्ताक्षर नहीं कर सकती। जिसके कारण हर कम्पनी की एक सार्वमुद्रा होती

है जो कम्पनी के अधिकारयुक्त हस्ताक्षर का कार्य करती है। कम्पनी के हर महत्वपूर्ण दस्तावेज पर इसकी सार्वमुद्रा अंकित की जाती है।

7. **नियंत्रण व प्रबंधन -** कम्पनी का प्रबन्ध व नियन्त्रण निदेशक मंडल के द्वारा
   किया जाता है जिसका चयन सभी अंशधारियों के द्वारा वोट देकर किया जाता है। स्वामित्व एवं प्रबंध का अलग-अलग होना कम्पनी की एक महत्वपूण विशेषता है।

संयुक्त पूंजी कम्पनी के गुण

1. **सीमित दायित्व -** अंशधारियों का दायित्व उनके द्वारा खरीदे गए शेयरों के अंकित मूल्य अथवा उनके द्वारा दी गई गारंटी की राशि तक सीमित होता है।
2. **विशाल वित्तीय साधन -** कम्पनी के पास वित्तीय साधन बहुत अधिक होते हैं। वह विभिन्न प्रकार की प्रतिभूतियां जारी करके, जनमा से जमा स्वीकार करके, विभिन्न वित्तीय संस्थाओं से ऋण लेकर – बहुत अधिक मात्रा में वित इकट्ठा कर सकती है।
3. **अंशों के हस्तांतरण में सुविधा -** कम्पनी के अंश बाजार में आसानी से खरीदे और बेचे जा सकते हैं। इस कारण आम जनता को कम्पनी में पैसा निवेश करने लिए प्रोत्साहन मिलता है।
4. **स्थायी अस्तित्व -** कम्पनी का अपने सदस्यों से पृथक अस्तित्व होने के कारण, उनकी मृत्यु दिवालियापन तथा अक्षमता का कम्पनी के अस्तित्व पर कोई प्रभाव नहीं पड़ता है।
5. **वृद्धि और विस्तार -** कम्पनी के पास विशाल वित्तीय साधन होते हैं, जिसकी वजह से इसका विस्तार तथा वृद्धि करना आसानी से संभव हो पाता है।
6. **पेशेवर प्रबन्ध -** विशाल वितीय साधन होने के कारण कम्पनी कुशल तथा पेशेवर व्यक्तियों की सेवाएं लेने में समर्थ होती है।

संयुक्त पूंजी कम्पनी की सीमाएँ

1. **निर्माण की जटिल प्रक्रिया -** कम्पनी के निर्माण की प्रक्रिया बहुत लम्बी, कठिन, जटिल होती है। इसमें लम्बी समयावधि लगती है तथा कोई कानूनी औपचारिकताओं को पूरा करना पड़ता है।
2. **गोपनीयता का अभाव -** कम्पनी को कम्पनी अधिनियम के प्रावधानों के अनुसार समय-समय पर कम्पनियों के रजिस्टोर को बहुत-सी सूचनाएँ देनी पड़ती हैं। ये समस्त सूचनाएँ जन साधारण को उपलब्ध होती हैं। इस कारणवश कम्पनी के लिए गोपनीयता बनाए रखना बहुत कठिन हैं।
3. **निर्णय लेने में देरी -** कम्पनी का वास्तविक प्रबंध संचालक मंडल द्वारा किया जाता हैं। इनकी मदद के लिए संस्था में उच्च, मध्य व निम्न स्तरीय प्रबंधक भी होते हैं। इस व्यवस्था में विभिन्न प्रस्तावों के सम्प्रेषण व अनुमोदन काफी समय लग जाता है। परिणामस्वरूप निर्णय लेने में देरी होती है।
4. **प्रेरणा का अभाव -** कम्पनी का प्रबन्ध स्वामियों के द्वारा नहीं बल्कि पेशेवर प्रबन्धकों के द्वारा किया जाता है। इन्हें संस्था से अपनी सेवाओं के बदले निश्चित वेतन प्राप्त होता है। इसीलिए कम्पनी में अधिक मेहनत व कुशलता से काम करने की प्रेरणा का अभाव होता है।
5. **अल्पतंत्रीय प्रबन्ध -** सिद्धातंत : कम्पनी एक लोकतात्रिक संस्था है परन्तु है, जो वास्तव में कुछ अंशधारियों के प्रतिनिधि होते हो कई बार यह निर्णय लेते समय अपने व्यक्तिगत हित और लाभ को ध्यान में रखते हैं तथा कम्पनी और अंशधारियों के हितों

की अवहेलना कर देते हैं।

कम्पनियों के प्रकार :-

स्वामित्व के आधार पर कम्पनियाँ दो प्रकार की होती है :- 1. निजी कम्पनी 2. सार्वजनिक कम्पनी

निजी कम्पनी

कम्पनी अधिनियम, 2013 की धरा 2(68) के अनुसार निजी कम्पनी का आश्य एक ऐसी कम्पनी से है जो :-

1. अपने सदस्यों के अंश हस्तांतरण के अधिकार पर प्रतिबंध लगाती है।
2. अपने सदस्यों की संख्या 2 से 200 तक सीमित रखती है जिसमें कम्पनी के वर्तमान व भूतपूर्व कर्मचारी (जो कि कम्पनी के सदस्य भी है) की गणना नहीं होती |
3. अपने अंशों के विनियोग के लिए जनता को आमंत्रित करने पर प्रतिबंध लगाती है।
4. अपने जन विक्षेपों में विनियोग के लिए जनता को आमंत्रित करने पर प्रतिबंध लगाती है।
5. चुकता अंश पूंजी की न्यूनतम राशि 1 लाख रूपये रखती है।

सार्वजनिक कम्पनी

कम्पनी अधिनियम, 2013 की धरा 2(71) के अनुसार "सार्वजनिक कम्पनी का आश्य ऐसी कम्पनी से है जो कि निजी नहीं है।"
एक सार्वजनिक कम्पनी वह है:-

1. जिसके अंशो के हस्तांतरण पर कोई प्रतिबन्ध नहीं होता।
2. जिसकी अधिकतम सदस्य संख्या पर कोई प्रतिबन्ध नहीं होता।
3. जो अंशो व ऋणपत्रों में विनियोग के लिए जनता को आमंत्रित कर सकती है।
4. जो जन निक्षेपों में विनियोग के लिए जनता को आमंत्रित कर सकती है।
5. जो चुकता अंश पूंजी की राशि न्यूनतम 5 लाख रूपये रखती है।

निजी और सार्वजनिक कम्पनी में अन्तर

आधार	निजी कंपनी	सार्वजनिक
1. नाम	अंत में 'प्राइवेटलिमिटेड' शब्द का होना अनिवार्य है |	अंत में केवल ' लिमिडेट' शब्द का होना अनिवार्य है।
2. सदस्यों की संख्या	न्यूनतम-2 अधिकतम-50	न्यूनतम-7 अधिकतम- कोई सीमा नहीं
3. संचालको की संख्या	कम से कम 2 संचालक	कम से कम 3 संचालक
4. न्यूनतम चुकता	1 लाख	5 लाख

अंश पूंजी		
5. जनता को आमंत्रण	ऋणपत्रों को निर्गमित करने के लिए जनता को आमंत्रित नहीं कर सकती |	ऋणपत्रों को निर्गमित करने के लिए जनता को आमंत्रित कर सकती है |
6. अंशों का हस्तांतरण	अंशों का हस्तांतरण की स्वतंत्रता नहीं है |	अंशों को हस्तांतरित कर सकती है |
7. सदस्यों की सूचि	सदस्यों की सूचि बनाना आवश्यक नहीं है |	50 यदि सदस्यों की संख्या से अधिक है, तो सूचि बनाना अनिवार्य है |
8. प्रारम्भ	समामेलन का प्रमाण-पत्र मिलने के baad	व्यापार प्रारम्भ करने का प्रमाण पत्र के baad

एक व्यक्ति कम्पनी (OPC)

इसका अभिप्राय एक ऐसी कम्पनी से है जिसमें केवल एक ही व्यक्ति सदस्य होता है तथा जो सामान्य कम्पनी के सिद्धांत पर काम करती है।

OPC की स्थापना के कारण

1. **असंगठित क्षेत्र को संगठित बनाना-** OPC के अस्तिव में आने से एकाकी व्यापारियों को असंगठित क्षेत्र से संगठित क्षेत्र में प्रवेश करने का अच्छा अवसर प्राप्त हुआ है। अब एक एकाकी व्यापारी दूसरे लोगों को साथ मिलाए बिना भी एक कम्पनी की स्थापना कर सकता है जिससे उसे संगठित क्षेत्र के सभी लाभ प्राप्त होंगे।
2. गलत ढंग से होने वाली निजी कम्पनी की स्थापना को रोकना : अब कम्पनी की स्थापना के लिए केवल औपचारिक्ता पूरी करने हेतु किसी दूसरे व्यक्ति को नाममात्र के लिए साथ मिलाने की जरूरत नहीं होगी।

OPC की विशेषताएँ

1. केवल एक व्यक्ति का होना जरूरी
2. निजी कम्पनी जैसी स्थिति
3. सीमित दायित्व
4. संचालकों की संख्या 15 तक हो सकती है।
5. OPC को वार्षिक साधरण सभा बुलाने की छूट है।
6. पृथक वैधनिक अस्तित्व
7. स्थायी अस्तित्व

कम्पनी का निर्माण

कम्पनी के निर्माण का अर्थ एक नई कम्पनी को अस्तित्व में लाना तथा उसका व्यवसाय प्रारम्भ कराने से होता है। एक नई कम्पनी के निर्माण की निम्नलिखित अवस्थाएं है :-

(1) प्रवर्तन (2) निगमन (3) पूजी अभिदान (4) व्यवसाय का आरम्भ करना

एक प्राईवेट कम्पनी को प्रथम दो अवस्थाओं से गुजरना होता है लेकिन एक सार्वजनिक कम्पनी को चारों अवस्थाओं से गुजरना होता है।

1. **प्रवर्तन -** प्रवर्तन के अन्तर्गत व्यवसायिक अवसरों की खोज की जाती है तथा कम्पनी का निर्माण किया जाता है।
   प्रवर्तन में उठाये जाने वाले कदम
   i. **व्यावसायिक अवसरों की पहचान करना -** प्रवर्तक का प्रथम कार्य है व्यावसायिक अवसरों की पहचान करना कि किस वस्तु या सेवा का निर्माण किया जाये।
   ii. **सम्भावना अध्ययन -** अवसरों की पहचान करने के बाद प्रवर्तक तकनीकी सम्भावना, वित्तीय और आर्थिक सम्भावना का अध्ययन करता है।
   iii. **नाम की स्वीकृति प्राप्त करना -** कम्पनी के नाम को छांटने के बाद प्रवर्तक उसे कम्पनी के रजिस्ट्रार के पास स्वीकृति के लिए प्रार्थना-पत्र देता है।
   iv. **पार्षद सीमा नियम के हस्ताक्षर कर्त्ताओं को निर्धारित करना -** प्रवर्तक को कंपनी के संचालकों को नियुक्त करना पड़ता है ताकि पार्षद सीमा नियम पर हस्ताक्षर कर सके ।
   v. **पेशेवरों की नियुक्ति -** प्रवर्तकों को कम्पनी के मर्चेट बैंकर्स तथा अंकेक्षकों की नियुक्ति करनी पड़ती है।
   vi. **आवश्यक प्रपत्र तैयार करना -** प्रवर्तकों को पार्षद सीमा नियम, पार्षद अन्तर्नियम आदि वैधानिक दस्तावेजों को रजिस्ट्रार के पास भेजने के लिए तैयार कराना पड़ता है।
2. **निगमन -** निगमन का अर्थ कम्पनी अधिनियम 1956 के अधीन कम्पनी का रजिस्ट्रेशन कराने एवं निगमन प्रमाण-पत्र प्राप्त करने से होता है। निगमन अवस्था में उठाये जाने वाले कदम :
   i. **निगमन हेतु आवदेन देना -** कम्पनी के प्रवर्तक को कम्पनी का रजिस्ट्रेश कराने के लिए राज्य के रजिस्ट्रार के पास आवदेन-पत्र भेजना होता है।
   ii. **आवश्यक प्रपत्र जमा कराना -** प्रवर्तकों को निम्नलिखित प्रपत्र जमा कराने होते हैं:
      1. पार्षद सीमा नियम
      2. पार्षद अंतर्नियम
      3. पंजीकृत पूजी का विवरण
      4. संचालकों की स्वीकृति
      5. प्रस्तावित प्रबन्ध संचालकों के साथ ठहराव
      6. वैधानिक घोषणा
   iii. **शुल्क का भुगतान -** उपरोक्त प्रपत्रों के साथ रजिस्ट्रेशन की फीस जमा करानी पड़ती है। यह फीस अधिकृत पूंजी पर निर्भर करती है।
   iv. **रजिस्ट्रेशन -** रजिस्ट्रार सभी दस्तावेजों की जांच करता है। जांच ठीक पाये जाने के बाद वह कम्पनी का नाम रजिस्टर कर लेता है।
   v. **निगमन का प्रामण-पत्रा प्राप्त करना –** कम्पनी का नाम रजिस्ट्रार हो जाने के बाद रजिस्ट्रार निगमन प्रमाण-पत्र जारी करता है। जिसे कम्पनी का जन्म प्रमाण-पत्र कहा जाता है।
3. **पूंजी अभिदान -** एक सार्वजनिक कम्पनी अंशों व ऋण-पत्रों को जारी करके, जनता से कोष प्राप्त कर सकती है। इसके लिए इसे

प्रविवरण जारी करना होता है तथा निम्न कदम उठाने होते हैं।

i. **सेबी से स्वीकृति प्राप्त करना -** सेबी भारतीय पूंजी बाजार को नियन्त्रित करती है एक सार्वजनिक कम्पनी को जनता से पूंजी जुटाने के लिए सेबी से मंजूरी लेनी पड़ती है।

ii. **प्रविवरण फाईल करना -** प्रविवरण का अर्थ ऐसे प्रपत्र से जो जनता से निक्षेप आमंत्रित करता है। कम्पनी के अंशों या ऋणपत्रों को क्रय करने के लिए जनता के आमंत्रित करता है।

iii. **बैंकर्स दलालों एवं अभिगोपकों की नियुक्ति -** कम्पनी द्वारा नियुक्त बैंक आवेदन राशि प्राप्त करते हैं दलाल जनता को शेयर आवेदन करने के लिए प्रोत्साहित करते हैं यदि जनता सभी शेयर के लिए आवेदन नहीं करती तो अभिगोपक कमीशन लेकर सभी शेयर खरीद लेते हैं।

iv. न्यूनतम अभिदान - सेबी के अनुसार न्यूनतम अभिदान की राशि कुल निर्गमन का 90 प्रतिशत होना चाहिए नहीं तो शेयरों का आबंटन नहीं किया जाएगा तथा कम्पनी को आगामी 10 दिनों में आववेद राशि को वापस करना होगा |

v. **स्टाक एक्सचेज को आवेदन करना -** एक सार्वजनिक कम्पनी को अपने शेयर किसी शेयर बाजार में लिस्ट कराना आवश्यक है। इसलिए प्रवर्तक किसी शेयर बाजार में आववेद करते हैं।

vi. **अंशों का आबंटन -** अंशों के आबंटन से अभिप्राय प्राप्त किये गये आवेदन-पत्रों को स्वीकार करना है। शेयर होल्डर को आबंट पत्र भेजा जाता है तथा रजिस्ट्रार के पास शेयर होल्डर का नाम, पता व अन्य जानकारी भेजी जाती है।

4. **व्यवसाय आरम्भ करना -** एक सार्वजनिक कम्पनी को व्यवसाय आरम्भ करने के प्रमाण-पत्र की आवश्यकता होती है। इसे प्राप्त करने के लिए रजिस्ट्रर के पास निम्नलिखित प्रमाण-पत्र भेजने आवश्यक है।

i. इस बात की घोषणा की न्यूनतम अभिदान 90 प्रतिशत प्राप्त कर लिया गया है।

ii. इस बात की घोषणा की सभी संचालकों ने जितने शेयर प्राप्त किये हैं उनकी राशि जमा करा दी है।

iii. इस बात की घोषणा की उपरोक्त आवश्यकताएं पूर्ण कर ली गई हैं। इन घोषणाओं पर सभी संचालकों के हस्ताक्षर होने चाहिए।

कम्पनी के निर्माण के प्रयोग किये जाने वाले महत्वपूर्ण प्रपत्र

1. **पार्षद सीमा नियम -** पार्षद सीमा नियम कम्पनी का महत्वपूर्ण दस्तावेज है। बिना पार्षद नियम के कोई भी कम्पनी रजिसटर्ड नहीं कराई जा सकती । इसे कम्पनी का जीवन दायी दस्तावेज भी कहा जाता है।

i. **स्थान वाक्य -** इस वाक्य में उस राज्य का नाम लिखा जाता है जिसमें कम्पनी का प्रजीकृत कार्यालय स्थापित किया जाता है।

ii. **उद्देश्य वाक्य -** इस वाक्य में कम्पनी के मुख्य उद्देश्य तथा मुख्य उद्देश्य के सहायक उद्देश्य दिये रहते हैं

iii. **दायित्व वाक्य -** इस वाक्य के अन्तर्गत यह बताया जाता है कि कम्पनी के सदस्यों का दायित्व उसके द्वारा लियें गए अंशों पर अदत्त राशि तक सीमित है।

iv. **पूंजी वाक्य -** इस वाक्य के अन्तर्गत उस पूंजी की मात्रा को निर्धारित किया जाता है। जिसमें कम्पनी का पंजीयन किया गया है।

2. **पार्षद अन्तर्नियम -** पार्षद अंतर्नियम में कम्पनी के आन्तरिक प्रबन्ध के नियम दिये जाते हैं। यह कम्पनी के संचालकों एवं अधिकारियों के अधिकार एवं कर्तव्यों का वर्णन करता है।

पार्षद - अन्तर्नियम की विषय सामग्री

i. अंश पूंजी की राशि एवं अंशों के वर्ग
ii. प्रत्येक वर्ग के शेयर धारक के अधिकार
iii. शेयर के आबंटन की प्रक्रिया
iv. शेयर जारी करने की प्रक्रिया
v. शेयरों के हरण करने एवं पुनः जारी करने की प्रक्रिया
vi. सभाओं में वोट देने एवं प्राक्सी सम्बन्धी नियम
vii. संचालकों के नियुक्त करने व हटाने की प्रक्रिया
viii. लाभांश की घोषणा एवं भुगतान सम्बन्धी नियम
ix. पूंजी के परिवर्तन की प्रक्रिया
x. कम्पनी के समापन की प्रक्रिया

3. **प्रविवरण -** प्रविवरण एक ऐसा प्रपत्र है जो जनता को शेयर या ऋण खरीदने के लिए आमन्त्रित करता है। इसमें कम्पनी का पूरा इतिहास होता है। कमानी क वर्तमान एवं भावी समावनाएं नियोजकों को बताई

   प्रविवरण की विषय सामग्री -

   i. इस कमानीका नाम पता एवं जिप्ट ऑफसक पता दिया जाता
   ii. कम्पनी के मुख्य उद्देश्य।
   iii. कम्पनी की पंजीकृत पूंजी एवं अंशों के प्रकार।
   iv. संचालकों के नाम एवं पते।
   v. बैंक का नाम, ब्रेकर का नाम एवं अभिगोपकों के नाम।
   vi. मर्चेन्ट बैंकर्स के नाम ।

4. **स्थानापन्न प्रविवरण -** एक सार्वजनिक कम्पनी जो कम्पनी में धन विनियोग करने के लिए साधारण जनता को आमंत्रित नहीं करना चाहती वह प्रविवरण को निर्गमित नहीं करती। इस स्थिति में उसे कम्पनियों के रजिस्ट्रार के पास एक 'स्थानापन्न प्रविवरण दाखिल करना होगा। यह सभी संचालकों द्वारा हस्ताक्षरित किया जाना चाहिए और इसका एक प्रति रजिस्ट्रार के पास जमा की जानी चाहिए। प्रविवरण आबंटन से कम-से-कम तीन दिन पहले दाखिल कर देना चाहिए।

पार्षद सीमा नियम तथा पार्ष अन्तर्नियम में अंतर

(Memorandum of Association) (Article of Association)

अंतर का अधार	पार्षद सीमानियम	पार्षद अन्तर्नियम
1. उद्देश्य	कम्पनी के उद्देश्यों का वर्णन करना है।	पार्षद सीमानियम में वर्णित उद्देश्यों को पूरा करने के लिए नियम बनाना है।
2. स्थिति	कम्पनी का अत्यन्त महत्वपूर्ण प्रलेख है ।	कम्पनी का सहायक प्रलेख है ।

3. वैधता	सीमानियम मे प्रदत्त शक्तियों से बाहर किए गए कार्य कम्पनी द्वारा किए गए कार्य नहीं माने जाते तथा इनकी पुष्टि समस्त सदस्य भी नहीं कर सकते।	अंतर्नियमों में प्रदत्त शक्तियों से बाहर किए गए कार्य भी अवैध होगें परंतु इनकी पुष्टि बाद में सदस्यों द्वारा संभव है।
4. संबंध	यह कम्पनी तथा बाहरी लोगों के मध्य संबंधों की व्याख्या करता है।	यह सदस्यों और कम्पनी के मध्य संबंधों की व्याख्या करता है।
5.आवश्यकता	कम्पनी का रजिस्ट्रेशन कराते समय इसको जमा करना पड़ता है।	निजी कम्पनी के लिए इसका होना अनिवार्य है परंतु सार्वजानिक कंपनी के लिए यह आवश्यक नहीं है |
6. परिवर्तन	इसको आसानी से परिवर्तित नहीं किया जा सकता। कई मामलों में न्यायालय की स्वीकृति आवश्यक होती है।	इसमें विशेष प्रस्ताव द्वारा आसानी से परिवर्तन किया जा सकता है |

व्यवसाय के उपक्रम के चयन में विचारणीय कारक :-

व्यावसायिक संगठन के प्रारूप का चुनाव करते समय निम्न कारकों का ध्यान रखना चाहिए :-

1. **प्रारंभिक लागत -** एकल स्वामित्व संगठन की स्थापना के लिए कोई कानूनी औपचारिकताएँ नहीं करनी पड़ती तथा कम खर्च में हो जाती है। जबकि कम्पनी के निर्माण की कानूनी प्रक्रिया खर्चीली तथा लम्बी है। इसलिए एकल स्वामित्व अधिक उचित है।
2. **दायित्व -** एकल स्वामित्व और साझेदारी स्वामी का दायित्व असीमित होता है। परंतु सहकारी समितियों तथा कम्पनियों में दायित्व सीमित होता है। इसलिए, कम्पनी संगठन अधिक उचित है।
3. **निरंतरता-** एकल स्वामित्व तथा साझेदारी फर्मा में मृत्यु दिवालियापन या पागलपन होने पर संगठन को बंद करना पड़ता है परंतु सयुक्त हिन्दू व्यवसायों, सहकारी समितियों एक कम्पनी की निरतंरता पर इन घटकों का उपयुक्त रहती हैं।
4. **प्रबंध की योग्यता -** एकल स्वामित्व तथा संयुक्त हिन्दू परिवार संगठनों में प्रचालन के सभी क्षेत्रों में विशेषज्ञों की सेवाएँ प्रदान करना कठिन होता है जबकि कम्पनियों एवं साझेदारी संगठनों में इसकी सम्भावनाएँ अधिक होती है।
5. **पूँजी की आवश्यकता -** बड़ी मात्रा में पूँजी जुटाने के लिए कपनी अधिक श्रेष्ठ होती है जबकि मध्य एवं छोटे आकार के व्यवसायों के लिए साझेदारी या एकल सवामित्व अधिक उपयुक्त रहेंगे।
6. **नियंत्रण -** सीधे नियंत्रण एवं निर्णय लेने के लिए एकल स्वामित्व को पंसद किया जाता है जबकि स्वातिमयों के नियंत्रण तथा निर्णय में भागीदारी के लिए साझेदारी या कम्पनी को अपनाया जाता है।
7. **व्यवसाय की प्रकृति -** ग्राहकों से सीधे संपर्क के लिए एकल स्वामित्व वहाँ साझेदारी अधिक उपयुक्त रहती है।